AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

सार्वकालिक बुद्ध के उपदेश

ORIGINAL ARTICLE

Author
डॉ. जगजीवन कुमार
सहायक प्राध्यापक, प्राचीन इतिहास विभाग
वी.एम कालेज
पावापुरी, नालंदा, बिहार, भारत

शोध सार

ईसा पूर्व छठी शताब्दी संपूर्ण विश्व में अध्यात्मिक जागृति एवं वैचारिक क्रांति के लिए प्रसिद्ध है। इसी समय चीन में कन्फयूशियस और लाओत्से का, यूनान में पाईथोगोरस, सुकरात और अफलातून का, ईरान में जरथुस्ट्र, इजराल में नवियों को तथा भारत में महावीर और बुद्ध का प्रादुभाव हुआ। आज संपूर्ण विश्व साम्प्रदायिक शक्तियों एवं धर्मोन्माद से आहत है। साम्प्रदायिकता का अंत किया जा सकता है। बुद्ध साम्प्रदायिकता का विरोधी और धार्मिक सहिष्णुता के प्रबल समर्थक पूरोहित का यह संदेश भारत जैसे आर्थिक संकट–ग्रस्त देश के राजनेताओ एवं आर्थिक संकट से गुजरा रहे हैं। ऐसी स्थिति में पुरोहित का यह संदेश बुद्ध के समय में जितना प्रासंगिक था, उससे भी कहीं अधिक आज यह प्रासंगिक है।

मुख्य शब्द

बुद्ध, उपदेश, आर्थिक संकट, अध्यात्म.

बुद्ध का संदेश चीन, तिब्बत, मंगोलियां, इण्डोनेशिया, बर्मा (म्यांमार), कम्अबोडिया, वियतनाम, लाओस, कोरिया तथा थाइलैण्ड आदि देशों तक फैला। बौद्धधर्म की यह विश्व व्यापकता भगवान बुद्ध के असाधारण व्यक्तित्व की परिचायिका है। बौद्धधर्म, दर्शन, साहित्य और कला ने त्रस्त मानव जाति और दरिद्रता का बोलबाला है। आज संपूर्ण विश्व में हिंसा एवं आतंकवाद, सांप्रदायिकता एवं धमोन्माद, जातिवाद और दरिद्रता को बोलबाला है। बुद्ध ने समाज में प्रचलित इन बुराईयों का खुलकर विरोध किया। समाज में इन बुराईयों का आज क्यों बोलबाला है? इसका उत्तर है– मनुष्य की स्वार्थपरता और धमोन्माद। त्रस्त मानव जाति के लिए ये समस्याएं आज बहुत बड़ी चुनौती बनी हुई है। इन समस्याओं का समाधान बौद्ध उपदेशों से संभव है। इन समस्याओं के समाधानार्थ बौद्ध की चर्चा यहाँ स्पष्ट है:

अहिंसा का उपदेश

अहिंसा बौद्ध धर्म का मेरूदंड है। इस बिना नैतिक और आध्यात्मिक विकास संभव नहीं है। भगवान् बुद्ध का धम्मपद के कथन है कि जो सभी प्राणियों के प्रति वैर विहिन हुए विचरण करता है,उसे परम पद की प्राप्ति होती है:

अहिंसका ये मुनयो, निच्चे संवुता।
ये यंति अच्चतं ठानं, यत्थ गंत्वा न सोचरे।।[1]

बौद्ध देवोपासक के स्थान पर शीलोपासक हैं। बौद्ध शीलों में व्यापक स्थान अहिंसा का है। आचार्य आर्यदेव ने सार रूप में अहिंसा को धर्म कहा है:

धर्मसमासतोऽहिंसा वर्णयंति तथागताः।
शून्यतामेव निर्वाणं केवलंतदिहोभयम्।।[2]

भगवान बुद्ध ने व्यक्ति,समाज और धर्म के क्षेत्र में प्रचलित हिंसा का एक साथ विरोध किया। उन्होंले हिंसक राजन्यों और ब्रहामणों के मध्य स्वयं उपस्थित होकर यज्ञीय पशुओं को मुक्त करवाया। यज्ञ यूपों को तुड़वाया और पशु बलि को बंद करा दिया।[३] बुद्ध ने यह भी बताया कि प्राचीन काल में हिंसामय यज्ञ नहीं होते थे। हिंसा के अभाव में संसार सुखी था किंतु जब यज्ञ स्थल पर पशु बलि दी जाने लगी, तब से दुःख दारिद्रय में वृद्धि हुई।

पहले संसार में तीन रोग–इच्छा,क्षुधा और बुढ़ापा थे किंतु पशु हिंसा से उनकी संख्याः

त्यो रोगा पुरे आंसु, इच्छा अनसनं जरा।
प्सूनं च समारंभा, अट्ठानवुतिमागमुं।[४]

उक्त कथन से स्पष्ट है कि वैदिक कर्मकांड में बुद्ध की आस्था नही थी। जब उनसे कर्म काण्ड करने के लिए,कहा गया तब उन्होंने कहा कि यदि कोई कहता है कि मुझे धर्म के लिए इष्ट फल देने वाले और अपने कुलोचित यज्ञों को करना चाहिए तो मैं यज्ञों को दूर से ही नमस्कार चाहता हूँ, क्योंकि दूसरों को दुःख देकर अपने सुख की कामना मुझमें नही हैः

यदात्थ चापीष्टफलां कुलोचिंता, कुरूष्व धर्माय मखाक्रियामितिं।
नमो मखभ्यो न हि कामये सुखं, परस्स्य दुःखाक्रियामिति।।[५]

वैदिक यज्ञीय हिंसा को जहाँ तथागत मानव जाति के लिए हितकारी नहीं मानते,वहीं युद्ध की विभीषिका से भी वे अनभिज्ञ नहीं थे। आज संपूर्ण विश्व युद्ध की विभीषिका एवं हिंसा से त्रस्त है। यह हम सभी भली–भाँति जानते हैं। आंतकवादियों का कश्मीर की स्वतंत्रता के नाम पर दिल्ली में लाल किला, कश्मीर पर .... आतंक किया गया। नई दिल्ली में संसद भवन पर आक्रमण इसके ताजा उदाहरण है। आज अमरीका और इराक के युद्धोन्माद का परिणाम मानव जाति को विनाश से बचा पाएगा? ऐसे समय मे तथागत का अहिंसा का संदेश मानव जाति की रक्षा के लिए अमोघ मंत्र है। बुद्ध ने अपने उपदेश में कहा है कि युद्ध के द्वारा शांति संभव नहीं है। युद्ध का दुष्परिणाम घृणा,अत्याचार, विनाशक आंदोलन, पुनःशस्त्रीकरण और नए–नए आयुधां में प्रकट होता है।

युद्ध में विजय घृणा को जन्म देती है, पराजित होने वाला दुःखाभिभूत हो जाता हैः

जयं वेरं पसवति दुक्खं सेति पराजितो।
डपसंतो सुखं सेति हित्वा जयपराजय।[६]

घृणा का अंत करने का उपाय है प्रेम। मनुष्य द्ारा युद्धाप्रियता को त्यागकर अहिंसा को अपनाना होगा, तभी मानव जाति की रक्षा हो सकेगी। भगवान् बुद्ध के धम्मपद में ठीक ही कहा है कि कभी भी वैर यहाँ शांत नहीं होतेः

न हि वेरने वेरानि सम्मंतीध कुदाचनं।
अवेरेन च सम्मन्ति एस धम्मो सनंतनों।।[७]

बुद्ध का यह उपदेश मानव जाति को युद्ध में विनाश से .त्राण पाने का अमोध मंत्र है। आज हमारे देश भारत में ही नही अपितु संपूर्ण विश्व में छोटी–छोटी बातों पर सीमा विवाद चल रहे हैं। ये सीमा विवाद कभी–कभी युद्ध का रूपे लेते हैं, जिससे निर्दोष मानव जाति स्वाभाविक है। इसके समर्थन में अट्ठकथा का संदर्भ उद्धृत करना उचित होगाः

'शाक्य और कोलिय देशों के बीच में रोहणी नदी पर एक ही बांध बांधकर शाक्य और कोलिय खेती करते थे। एक बार ज्येष्ठ मास में सूखा पड़ गया। मजदूरों ने आमात्यों से, आमात्यों ने राजा से कहा। इस पर शाक्य और कालिय परस्पर युद्ध के लिए तैयार हो गए। बुद्ध आकाश मार्ग से वहाँ गए और रोहणी नदी के बीच मे पालथी लगाकर बैठ गए। शाक्यों ने उन्हें वहाँ देखकर अपने हथियारों को छोडकर बुद्ध की वंदना की। बुद्ध ने दोनों पक्षों के राजाओं से कहा की थोड़े से पानी के लिए अमूल्य क्षत्रिय जाति का विनाश उचित नही है। दोनों पक्षों की बात मानकर युद्ध का विचार त्याग दिया। बुद्ध का यह उपदेश छोटी–छोटी बातों पर होने वाली युद्ध विभीषिका, आंतकवाद एवं मानवजाति के संहार को रोकने में औषध का कार्य करेगा।'

साम्प्रदायिकता एवं धर्मोन्माद का विरोध

आज संपूर्ण विश्व साम्प्रदायिक शक्तियों एवं धर्मोन्माद से आहत है। साम्प्रदायिकता का अंत किया जा सकता है। बुद्ध साम्प्रदायिकता का विरोधी और धार्मिक सहिष्णुता के प्रबल समर्थक थे। उनके अनुसार जो दूसरों के धर्म को स्थान नहीं देता, वह मूर्ख,पशु और प्रज्ञाहीन होता हैः

परस्स वे धम्मनाजुजानं, बालो भगो होति निहीनपञ्ञो।
सब्बेव बाला सुनिहीनपञ्ञ सब्बेविमे दिट्ठिपरिब्बसाना।।

आज साम्प्रदायिकता शत्रुता का प्रमुख कारण बनी जा रही है। बुद्ध ने धम्मपद में उपदेश दिया है कि शत्रुभाव से कदापि शत्रुभाव को शांत नहीं किया जा सकता है[१०]:

न हि वेरेन वेरानि सम्मंतीध कुदाचनं।
अवेरेनल च सम्मन्ति एस.धम्मो सनंतनों।।

उपालिसुत और सीहसुत बुद्ध की महान् धार्मिक सहिष्णुता के परिचायक हैं। उपाति गृहस्थ तथा सेनापति सिंह दोनों पहले महावीर के श्रावक थे। दोनों ही बुद्धोपदेश को सुनकर बुद्ध के अनुयायी हो गए। बुद्ध ने दोनों से कहा कि गृहपति दीर्घ काल से तुम्हारा कुल निग्रंथों के लिए प्याऊ की तरह रहा है। निग्रंथों के आने पर पिंड नहीं बनना चाहिए –ऐसा कदापि नहीं सोचना चाहिए।” इससे स्पष्ट है कि बुद्ध के धार्मिक साम्प्रदायों के प्रति भी सुहानभूति थी। धर्म मे सबका समान अधिकार है, अपनी इच्छा से इसे ग्रहण करने की स्वतंत्रता उन्होंने दी। उन्होंने कहा कि “जिस प्रकार अनेक नदियाँ (जैसे –गंगा, यमुना, अचिरवती, सरयू, मही) महासमुद्र में पड़कर अपने पूर्व के नाम और गोत्र को छोड़ देती है और वे सभी महासमुंद्र कहलाता है। इसी प्रकार बौद्ध संघ में प्रवेश करने पर लोग अपनी जाति के अस्तित्व को खो देते है।”

जातिवाद का विरोध एवं समानाधिकार के प्रबल समर्थक

बुद्ध ने जन्मना जातिवाद की कुरीति की भर्त्सना की है। बौद्ध धर्म में मानव –मानव समान है। राजा और रंक में कोई भी भेद नही है। बुद्ध ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि उच्च वर्ण में जन्म लेने से कोई मनुष्य महान नहीं होगा, अपितु अपने सत्कर्मों से ही महान होता है। बुद्ध ने वासेट्ठ सुत्त में जाति कथा का विस्तार से कथन किया है। वहाँ उनका कथन है कि पशु–पक्षी तथा प्राणियों में भिन्न–भिन्न जातियाँ होती है, जैसे जो जल में विचरण करता है, वह मतस्य है, जो पंख की सवारी पर विचरण करता है, वह विहंगम अथवा पक्षी है। जिस प्रकार इन जातियों में भिन्न–भिन्न जातिमय लक्षण हैं, उसी प्रकार मनुष्यों में भिन्न–भिन्न जातिमय लक्षण नहीं हैं। मनुष्य में जो गोरक्षा से जीविका चलाता है, वह गोपालंक है, जो व्यापार करता है, वह वाणिक् है, जो बिना दिए ग्रहण करता है, वह चोर है। इस प्रकार जन्मना न कोई श्रेष्ठ होता है और न कोई वृषल अपितु कर्म से वृषल और कर्म से ही श्रेष्ठ होता है।[१३]

आज समाज में समानाधिकार की चर्चा प्रायः सुनाई देती है। समानाधिकार की स्थापना सर्वप्रथम बुद्ध ने ही की थी। उन्होंने अपने उपदेश को केवल सिद्धांत रूप में ही नही रखा, बल्कि उसे व्यवहारिक रूप में भी परिधित किया। उन्हींने भद्दी, अनरूद्ध, आंनद आदि छह शाक्य कुमारों को छोड़ नीच जाति में उत्पन उपालि नाई को पहले प्रव्रजित किया। शाक्य वंश में उत्पन इन छह शाक्यों के अभिमान का मर्दन बुद्ध ने कर दिया। बुद्ध ने उपालि नाई को प्रव्रजित किया। इस प्रकार उपालि ने शाक्य राजकुमारों में वरीयता प्राप्त कर लीं संघ के नियमानुसार इन भिक्षुओं को उपालि का अभिवादन एवं सम्मान करना था। बुद्ध ने समाज में हेय दृष्टि से देखी जानेवाली आम्रपाली वेश्या के यहाँ स्वीकार किया। उन्होंने वैशाली गणराज्य के श्रेष्ठ लिच्छवियों का निमंत्रण ठुकराकर आम्रपाली को समाज में सम्मान दिलाया।

दरिद्रता के दबाव को कम करने के लिए उचित आर्थिक नीति के समर्थक

पालि के ग्रंथों के अध्ययन से पता चलता है कि जो भी उस समय की आर्थिक व्यवस्था थी, बुद्ध ने उसे मान्यता दी थी। राज्य के कोषागार करों से आपूरित थे, व्यापारी वर्ग अधिकारिक लाभ अर्जन करके धनवान् होते जा रहे

थे, किंतु दूसरी ओर जनसामान्य की स्थिति उत्साहवर्द्धक नही थी। दीघनिकाय के 'चक्कवत्तिसीहनादसुत्त 'में उल्लेख है कि धनाभाव के कारण दरिद्रों में चोरी, हत्या, मृषावाद, लूटपाट, आदि दुर्व्यसन पनपने लगे थे। इन अकुशल कर्मों को लोग विवशता वश करते थे। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि यह सामान्य वर्ग मजदूर वर्ग और इस वर्ग को अपनी न्यायोचित मजदूरी नहीं मिलती थी। बुद्ध यह भलीभांति जानते थे कि किसी राष्ट्र का विकास उसकी आर्थिक नीति पर निर्भर करता है। उनके समय में भी ऐसी अनेक बातें थी, जो राष्ट्र की आर्थिक सरंचना को प्रभावित कर सकती थी। आर्थिक सरंचना को विखण्डन से बचाने के लिए बुद्ध के विचार आज से २५00 वर्ष पूर्व जितने प्रासगिंक थे, उतने आज भी है।

बुद्ध की मान्यता है कि अर्थ–व्यवस्था का विखण्डन अथवार दरिद्रता का दबाव लोगों, समाजों और राष्ट्रों के लिए अभिशाप है। सर्वप्रथम 'कूटदन्तसुत 'से उदाहरण देना चाहूंगा, जहाँ बुद्ध ने बताया है कि राष्ट्रीय संपत्ति को समारोह आदि में व्यय करना कितनी बड़ी मूर्खता है? जब देश मुद्रास्फीति के संकट से गुजर रहा हो, तब समारोह तथा उत्सवों की परंपरा उत्पादकता को ही प्रभावित नही करती, वरन् दीर्घावधि के लिए विनाशी भी बन जाती है इस विचारधारा को समझने के लिए प्रस्तुत सुत्त में एक कथा उद्धृत है, जिससे महाविजित नामक राजा का उल्लेख है,जो संपूर्ण सुख –समृद्धि से युक्त था, उसने यह निश्चिय किया कि वह एक महायज्ञ करेगा। कथा के अनुसार इस यज्ञ में दुधारू पशु और राष्ट्रीय संपत्ति की आहूति देनी थी। इस सारे व्यय का भार जनता पर ही पड़ता क्योंकि अधिक कर लगाकर ही इन व्यर्थ के कार्यकलापों का व्यय निकाला जाता। कथा से यह भी संकेत मिलता है कि राज्य सत्ता की अनभिज्ञता के कारण राज्य की बिगड़ती हुई राजा के पुरोहित ने उन्हें परामर्श दिया कि इस प्रकार के प्रयोजन रहित कार्य करने के स्थान पर आर्थिक स्थिति को सुधारने वाली अघिक कारगार नीतियाँ बनाई जाए। पुरोहित के द्वारा राजा को परामर्श देते हुए कहता है–आपका राज्य कण्टकाकीर्ण तथा पीड़ा युक्त है, जिसमें ग्रामों, निगमों और नगरों में लूट दिखाई दे रही है,बटमारी भी देखी जाती है। आप दुर्दशा युक्त राज्य से कर लेते हैं इसलिए आपका उन्मूलन हो जाएगा, किंतु इस लूटपाट रूपी कील का उन्मूलन संभव नहीं है, क्योंकि ऐसे दुष्ट लोगों में से कुछ अवशिष्ट रहने पार वे कालांतर में राज्य में पशुपालन और कृषि कार्य करने के लिए उत्सुक है,उन्हें राजा भोजन और बीज प्रदान करे, जो वाणिज्य में उत्साहित हैं, उन्हें राजा पूंजी प्रदान करे, जो राज्य की सेवा के लिए उत्साहित है, उन्हें आप वेतन दें। इस प्रकार अपने–अपने कार्यों में निरत व्यक्ति राजा के राज्य को नहीं सताएंगे। इस प्रकार राज्य क्षेमयुक्त, अकण्टक तथा पीड़ा विहीन हो जाएगा। पुरोहित के परामर्श को मानते हुए राजा ने वैसा ही किया। इस प्रकार समग्र राज्य समृद्ध, अकण्टक एवं पीड़ा विहीन हो गया।" पूरोहित का यह संदेश भारत जैसे आर्थिक संकट–ग्रस्त देश के राजनेताओ एवं आर्थिक संकट से गुजरा रहे के लिए भी हैं। ऐसी स्थिति में पुरोहित का यह संदेश बुद्ध के समय में जितना प्रासंगिक था, उससे भी कहीं अधिक आज यह प्रासंगिक है। उनके उपदेश सार्वकालिक हैं।

निष्कर्ष

अंत में निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि बुद्ध के उपदेश अनेक प्रकार की संकीर्णताओं से रहित हैं। वर्णभेद या रंगभेद को इसमें कहीं भी स्थान नहीं दिया गया है। इसमें समूचे समाज को 'वसुधैय कुटूम्बकम्' बनाने की प्रेरणा है। यह शांति का समर्थक हैं। हिंसा भाव के उपशमन का इसमें पूर्ण विधान पाया जाता है। जिस दिन से भगवान् तथागत का अहिंसा का संदेश हमारे द्वारा भुला दिया गया है, उसी दिन से हमारा चित संकीर्ण हो गया है, हृदय अपवित्र, नीच और मलीन हो गया है भेदबुद्धि, हिंसा, क्षुद्रता और मत्सरता से चित्त जर्जरित हो गया है, जिससे संपूर्ण विश्व में हिंसा, आतंकवाद, शोषण और असहिष्णुता को बल मिला है। यदि प्रस्तुत शोध पत्र में चर्चित उपदेशों का परिपालन किया जाए तो उक्त सभी समस्याओं का समाधान संभव है, तभी त्रस्त मानव जाति की संरक्षा हो सकेगी और वह शत्रुओं में भी मित्रवत् सुखपूर्वक जीवित रह सकता है, जिसकी संपुष्टि धम्मपद की अधोलिखित गाथा से हो जाती हैः

सुसुखं वत जीवाम वेरिनेसु अवेरिनो।
वेरिनेसु मनुस्सेसु विहराम अवेरिनो।।

संदर्भ सूची

1. धम्मपद 17/5
2. चतु: शतक 12/23
3. दीघनिकाय,भाग–1, कूटदंतसुत्त,पृ 0 114–117,नालंदा संस्करण।
4. सुत्तनिपात,2/7/91, पृ0 314,नालंदा, संस्करण।
5. बुद्धचरित 11/64
6. धम्मपद 15/5
7. धम्मपद 1/5
8. (क) धम्मपद (अट्ठकथा, सहित), दुतियो भागों, पृ0 351–352, संपादक –वी फासवॉल,चिलियमस् एवं नारगेटे लंदन,1855।

   (ख) सुत्तनिपात अट्ठकथा, दुतियो भागो, पृ0117,संपादक डॉ0 अंगरात चौधरी, नव नालंदा महाविहार, नालंदा,1975।
9. सुत्तनिपात, चूलवियुहसुत्त,4/12/3
10. धम्मपद 1/5
11. (क)मज्झिमनिकाय, भाग–2,पृ0 52, नालंदा संस्करण।

    (ख) अंगुत्तरनिकाय, भाग –3,पृ0 298, नालंदा संस्करण।
12. उदान, पृ0127, नालंदा संस्करण।
13. (क) सुत्तनिपात,वासेट्ठसुत्त 3/9/57

    (ख) मज्झिमलिकाय, वासेट्ठसुत्त, पृ0374–380,बंबई विश्वद्यिालय संस्करण,1967
14. मज्झिमलिकाय,भाग–2, अस्स्लायनसुत्त, पृ0332, बंबई विश्वद्यिालय संस्करण,1967
15. सुत्तनिपात, वसलसुत्त 1/7!27,सुंदरिकभारद्‌ाजसुत्त 3/4/8, दीघनिकाय 1/3 अम्बट्ठसुत्त
16. चुल्लवग्गो, संघभेदकक्खंधक, पृ0 281–282, नालंदा नालंदा संस्करण 1956
17. दीघनिकाय,भाग –1, पृ0 166, संपादक, भिक्षु जगदीश काश्यप, नालंदा संस्करण,1958।

––==00==––